IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

पंडित दीनदयाल उपाध्याय के "दार्शनिक विचार- चतुर्थ पुरुषार्थ" का मूल्यांकन

***डॉ. अनिल कुमार,**

असिस्टेंट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग, श्री बजरंग पी. जी. कॉलेज, दादर आश्रम, सिकंदरपुर, बलिया, उत्तर प्रदेश

सारांश

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी ने अपने दार्शनिक विचारधारा के अंतर्गत चतुर्थ पुरुषार्थ पर विस्तृत व्याख्यान दिए। दीनदयाल जी का मानना था कि मानव जाति के शाश्वत सुख और कल्याण के लिए चारों पुरुषार्थों का पालन करना अति आवश्यक है। पुरुषार्थ का अर्थ उन कामों से है जिससे पुरुषत्व सार्थक हो। दीनदयाल जी धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष, चारों पुरुषार्थों का विस्तृत वर्णन किये। उनके अनुसार धर्म पुरुषार्थ अगर आधार है तो मोक्ष पुरुषार्थ पाना ही व्यक्ति का उद्देश्य है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी का मानना है कि चारों पुरुषार्थों में एकात्मकता और समन्वय बनाकर ही मानव परमसुख, कल्याण और परमानंद को प्राप्त कर सकता है।

कुंजी शब्द- पुरुषार्थ, पुरुषत्व, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, एकात्मकता, समग्रता, शाश्वत सुख, कल्याण, परमानंद।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी के दार्शनिक विचार को पढ़कर, समझकर और जानकर ही एकात्म मानववाद को जाना और समझा जा सकता है।

एकात्म मानववाद कोई नई विचारधारा नहीं है बल्कि जो हमारी सनातनी व्यवस्थाएं थी, सनातनी अर्थ- रचना थी, उसी का युगानुकूल रूप है। इस दर्शन का आधार ही भारतीय संस्कृति और प्रकृति है।

दीनदयाल उपाध्याय जी ने अपने इस दर्शन के अंतर्गत चतुर्थ पुरुषार्थों का विस्तृत वर्णन किये जो इस प्रकार है।

चतुर्थ पुरुषार्थ-

"पुरुषार्थ का अर्थ उन कामों से है जिनसे पुरुषत्व सार्थक हो।"

मानव जगत का पूर्ण विकास कैसे किया जाय? और उनकों शाश्वत सुख कैसे प्रदान किया जाय?

इसका यही उत्तर है कि हम लगातार प्रयत्न करें, प्रयास करे, मेहनत करे। इसके द्वारा ही हम शरीर ,मन ,बुद्धि और आत्मा को सुख दे सकते है। मनुष्य का विकास अर्थात इन चारों का विकास। इन चारों को सुखी रखना ही हमारी इच्छाएं या कामनाएं होती है और इनको तृप्त किये बिना हम मानव का पूर्ण विकास नही कर सकते है। मनुष्य के इच्छाओं के पूर्ति और उनके सुख व समग्र विकास के लिए ही भारतीय संस्कृति ने मानव जगत के सामने कर्तव्य रूप में चार पुरुषार्थो का आदर्श रखा है। जो इस प्रकार हैं - **धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।**

दीनदयाल उपाध्याय जी चतुर्थ पुरुषार्थो के विषय में लिखते हैं कि "जितनी भौतिक आवश्यकताएं हैं उनकी पूर्ति का महत्व हमने स्वीकार किया है, परंतु उन्हें सर्वस्व नहीं माना। मनुष्य के शरीर ,मन ,बुद्धि और आत्मा की आवश्यकताओं की पूर्ति, उसकी विविध कामनाओं, इच्छाओं तथा एषणाओं की संतुष्टि और उसके सर्वांगीण विकास की दृष्टि से व्यक्ति के सामने कर्तव्य रूप में हमारे यहां चतुर्थ पुरुषार्थ की कल्पना रखी गई है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की कामना मनुष्य में स्वाभाविक होती है और उनके पालन से उसको आनंद प्राप्त होता है।"

चारो पुरुषार्थो में 'मोक्ष' को परलोक की दृष्टि से श्रेष्ठ और परम पुरुषार्थ माना जाता है। यदि हम सांसारिक जीवन की बात करें तो 'अर्थ' और 'काम' केवल ये दो ही पुरुषार्थ बताए गए है।

'काम' पुरुषार्थ की बात करें तो इसके अंतर्गत केवल स्त्री और पुरुष का संबंध ही नहीं आता है बल्कि मनुष्य की अन्य सभी इच्छाओं और आवश्यकताओं को सम्मिलित किया जाता है और इसी प्रकार 'अर्थ' पुरुषार्थ के अंतर्गत केवल धन संपत्ति को ही शामिल नहीं करते हैं बल्कि इसके साथ-साथ ऐसे सभी साधन जिन से मनुष्य अपनी कामना पूर्ति करता है, को शामिल किया जाता है।

यदि हम देखें तो 'मोक्ष' जैसा परमपुरुषार्थ मानव जगत को पारलौकिक उन्नति और समृद्धि की ओर अग्रसर करता है तो वहीं दूसरी ओर 'अर्थ' और 'काम' जैसे पुरुषार्थ से मानव जगत वर्तमान जीवन में सुख ,कल्याण और आनंद का जीवन जीता है। इस प्रकार मानव को शाश्वत सुख और कल्याण प्रदान करने हेतु इन दोनों प्रकार के पुरुषार्थों में समन्वय करने वाला पुरुषार्थ 'धर्म' होता है। 'मोक्ष' पुरुषार्थ का संबंध परलोक से होता है तो शेष तीन पुरुषार्थ का संबंध इसी वर्तमान जीवन से होता है।

'धर्म' पुरुषार्थ को आधार बनाकर, 'अर्थ' और 'काम' पुरुषार्थ के माध्यम से लक्ष्य रूपी पुरुषार्थ 'मोक्ष' को पाना ही मानव समाज के लिए श्रेष्ठ है।

धर्म

चारों पुरुषार्थो में 'धर्म' पुरुषार्थ को आधार माना जाता है। भारतीय धर्म ग्रंथों के अनुसार 'धर्म' शब्द का अर्थ बहुत ही व्यापक है। इसको अंग्रेजी के रिलीजन का शब्दार्थ कहना बिल्कुल उचित नहीं है।

'धर्म' पुरुषार्थ के अंतर्गत उन सभी नियमों, व्यवस्थाओं, आचरण-संहिताओं व जीवन-प्रणाली और मूलभूत सिद्धांतों को शामिल करते हैं जिनसे 'अर्थ' , 'काम' और 'मोक्ष' पुरुषार्थ की सिद्धि होती है।

'धर्म' शब्द की उत्पत्ति 'धृ' धातु से होता है जिसका अर्थ 'धारण करना' होता है। 'धर्म' वह आधार है जिनसे मानव जगत का उन्नति एवं समृद्धि बढ़ती है और मोक्ष प्राप्ति का भागीदार बनता है। 'धर्म' के द्वारा ही हम समाज से बुराई को दूर कर सकते हैं। अगर मानव समाज से अथवा व्यक्ति में से धर्म को अर्थात नियम, व्यवस्था व सिद्धांत को हटा दिया जाए तो मानव समाज समाप्त हो जाएगा। मानव और पशु में कोई अंतर नही रह जायेगा।

अर्थ

चारों पुरुषार्थो में यदि 'धर्म' आधार है तो सांसारिक दृष्टि से 'अर्थ' पुरुषार्थ बहुत ही महत्वपूर्ण है। बिना 'अर्थ' के 'धर्म' नहीं टिक सकता। 'अर्थ' के बिना धर्म का कोई अस्तित्व नहीं बच पाता है। मानव समाज या किसी व्यक्ति के भौतिक सुख के लिए सबसे महत्वपूर्ण 'अर्थ' होता है।

दीनदयाल उपाध्याय जी 'अर्थ' के विषय में लिखते हैं- "भूख सब पाप कर सकता है। विश्वामित्र जैसे ऋषि ने भी भूख से पीड़ित होकर, शरीर धारण करने के लिए चांडाल के घर में चोरी करके, कुत्ते का जूठा मांस खाए थे। अतः हमारे यहां आदेश है कि 'अर्थ' का अभाव नहीं होने देना चाहिए, क्योंकि वह धर्म का घातक है।"

'अर्थ' पुरुषार्थ के अंतर्गत हम वर्तमान परिभाषा के अनुसार 'राजनीति और अर्थनीति' शामिल करते हैं, तो पुरानी परिभाषा के अनुसार 'अर्थ' के अंतर्गत 'दंडनीति और वार्त्ता' आती है। 'धर्म' के अस्तित्व के लिए जितना 'अर्थ' जरूरी है, उतना ही 'अर्थ' के लिए 'धर्म' भी जरूरी है। 'धर्म' से ही 'अर्थ' की सिद्धि होती है और यही उचित भी है।

काम

'काम' पुरुषार्थ के अंतर्गत मानव जगत की विभिन्न कामनाओं व इच्छाओं की पूर्ति को शामिल किया जाता है। मानव की इच्छाएं अनंत होती है। जब इच्छाएं 'धर्म' एवं 'अर्थ' के नियंत्रण से बाहर हो जाती है, तब यही इच्छाएं मानव को नीचे गिराती है, गलत दिशा में ले जाती है और अंततः मानव को पुरुषार्थहीन बना देती है। मानव जगत को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि धर्म के अनुसार ही उचित साधनों के उपयोग से अपनी इच्छा और वासनाओं की पूर्ति करना चाहिए। धर्महीन अर्थ, काम को दिशाहीन बना देता है। यदि मानव पर 'काम' हावी हो जाए या वासना हावी हो जाए और उस पर धर्म का नियंत्रण ना रहे तो अर्थ कब नष्ट हो जाएगा पता ही नहीं चलेगा।

मोक्ष

'मोक्ष' पुरुषार्थ को परम पुरुषार्थ कहा जाता है। 'मोक्ष' का अर्थ या अंतिम उद्देश्य मानव जगत को जीवन-मरण के दुखों से छुटकारा देना होता है।

मानव जगत का मुख्य उद्देश्य 'मोक्ष' प्राप्त करना होता है परन्तु इसका यह तात्पर्य बिल्कुल नहीं है की शेष पुरुषार्थ उसके लिए महत्वपूर्ण नहीं है। शेष पुरुषार्थ के अभाव में मानव 'मोक्ष' पा ही नहीं सकता।

मानव 'धर्म' के अभाव में अर्थ और काम के अभाव में 'मोक्ष' कभी भी प्राप्त नही कर सकता है।

मनुष्य धर्म को आधार बनाकर, अर्थ और काम के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति करता है। मोक्ष प्राप्ति से ही मनुष्य को परमानन्द की अनुभूति होती है।

निष्कर्ष-

निष्कर्ष रूप में देखा जाय तो मानव जगत के शाश्वत सुख, कल्याण और सर्वांगीण विकास के लिए चारों पुरुषार्थों में समन्वय व एकात्मकता होना बहुत जरूरी है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी का दर्शन समग्रता और एकात्मकता की ही बात करता है। अगर एक का भी अभाव हो तो मनुष्य को सुखी नहीं कर सकते हैं, उनका कल्याण नहीं बढ़ा सकते हैं। जैसे- यदि मानव के पास अर्थ नहीं है तो वह चोरी करेगा और जैसे ही चोरी करेगा धर्म अपने आप टूट जाएगा और ऐसे अर्थ का कोई मतलब नही है क्योंकि यह व्यक्ति को पुरुषार्थहीन बना देगा। यदि व्यक्ति धर्म का पालन करता है तो अर्थ के आभाव में भूखे पेट मर जाएगा तो ऐसे में धर्म की कोई महत्ता नही है। यह बहुत जरूरी है कि धर्म और अर्थ में समन्वय बना रहे।

इसी प्रकार, मानव के काम और इच्छा की पूर्ति करना भी बहुत जरुरी है। इच्छा पूर्ति करने के लिए हमको अर्थ चाहिए। यदि अर्थ नहीं रहेगा तो उसकी इच्छा पूरी नहीं कर सकते और बिना इच्छापूर्ति से मानव दिशाहीन हो जायेगा और धर्म को नष्ट कर देगा। यदि धर्महीन अर्थ हो तो काम और वासना इतना हावी हो जायेगा की वह अर्थ को ही नष्ट कर देगा। अतः काम या इच्छा, धर्म और अर्थ के नियंत्रण में हो।

उपरोक्त बातों से स्पष्ट है कि मानव जीवन के सुख और कल्याण के लिए चारो पुरुषार्थो में समन्वय और एकात्मकता होना जरूरी हैं। मानव के शाश्वत सुखी, कल्याण तथा समग्र विकास के लिए पुरुषार्थो का समग्र विचार करना बहुत जरूरी है क्योंकि पुरुषार्थो के सिद्धि से मनुष्य को शाश्वत सुख, कल्याण और परमानन्द की प्राप्ति होती है।

संदर्भ-

1. उपाध्याय, दीनदयाल. एकात्म मानववाद. नई दिल्ली: भारतीय जनसंघ कार्यालय.

2. उपाध्याय, दीनदयाल (1960). राष्ट्रजीवन की समस्याएं. लखनऊ: राष्ट्रधर्म प्रकाशन.
3. उपाध्याय, दीनदयाल (1972). राष्ट्रचिंतन. लखनऊ: राष्ट्रधर्म प्रकाशन.

4. उपाध्याय, दीनदयाल (1979). राष्ट्रजीवन की दिशा. लखनऊ: लोकहित प्रकाशन.

5. उपाध्याय, दीनदयाल (1989). हिन्दू संस्कृति की विशेषता. गाज़ियाबाद: जागृति प्रकाशन.

6. ठेंगड़ी, दत्तोपंत (1991). पंडित दीनदयाल उपाध्याय: व्यक्ति दर्शन खंड- 1: तत्व जिज्ञासा. नई दिल्ली: सुरुचि प्रकाशन.

7. गुप्त, बजरंग लाल (2019). राष्ट्र दृष्टि. प्रयागराज: संपादक- डॉ. चन्द्र प्रकाश सिंह, अरुंधति वशिष्ठ अनुसंधान पीठ.

8. गुप्त, बजरंग लाल (2017). भारतीय अस्मिता की निरंतरता. प्रयागराज: संपादक- डॉ. चन्द्र प्रकाश सिंह, अरुंधति वशिष्ठ अनुसंधान पीठ.

9. पाठक, विनोद चंद्र (2009). पंडित दीनदयाल उपाध्याय का राजनीतिक चिन्तन. नई दिल्ली: प्रकाशक- आर. डी. पाण्डेय, सत्यम पब्लिशिंग हाऊस.

10. गुप्त, बजरंग लाल (2010). एकात्म दृष्टि- भारत का भविष्य. प्रयागराज: संपादक- डॉ. चन्द्र प्रकाश सिंह, अरुंधति वशिष्ठ अनुसंधान पीठ.

11. शर्मा, महेश चंद्र (1994). दीनदयाल उपाध्याय कर्तव्य एवं विचार. नई दिल्ली: वसुधा पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड.

12. जोशी, मुरली मनोहर (1991). दीनदयाल उपाध्याय व्यक्ति और विचार. उत्तर प्रदेश संदेश, अंक- 9.

13. गोपाल, कृष्ण (2019). राष्ट्र का राजनीतिक प्रबोधन और एकात्म मानव दर्शन. पंडित दीनदयाल उपाध्याय व्यक्ति और व्यक्तित्व खण्ड - 1, प्रयागराज: संपादक- डॉ. जितेंद्र कुमार संजय और डॉ. इंद्र कुमार ठाकुर, साहित्य भंडार.

14. नेने, विनायक वासुदेव (1986). पंडित दीनदयाल उपाध्याय: विचार दर्शन खंड- 2 एकात्म मानव दर्शन. नई दिल्ली: सुरुचि प्रकाशन.